IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार अधिनियम 1996 एवं उसकी संरचना में बदलाव (मध्यप्रदेष के सन्दर्भ में)

Dr. Chandrapal
Assistant Professor, Department of Sociology
Government Degree College, Mant, Mathura, Uttar Pradesh, India

Abstract: संसद द्वारा पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 परित कर दिए जाने के बाद 11 मार्च 1997 को मध्य प्रदेश के पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग ने एक कार्यशाला का आयोजन किया, जिसमें आदिमजाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग ने इस केन्द्रिय कानून के प्रदेश के उपर संभावित प्रश्नों के बारे में अपना अभिमत प्रकाशित किया। इस कार्यशाला के उपरांत कानूनी एवं प्रशासकीय संरचना में बदलाव किए गए हैं वे निम्न हैं।.

मध्यप्रदेश भू–राजस्व संहिता (संशोधन) अधिनियम 1997

मध्यप्रदेश उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 की धारा 4 (ड़) यह व्यवस्था करती है कि अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि संक्रमण तथा अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति गलत तरीके से कब्जा की गई भूमि वापस दिलाने के अधिकार ग्राम सभा/ग्राम पंचायत को दिए जाएं। इस प्रावधान के संदर्भ में मध्यप्रदेश भू–राजस्व संहिता 1959 की धारा 170 (ख) में संशोधन करके एक नई उपधारा 2(क) जोड़ी गई।

धारा 2 (क) के अनुसार ग्राम सभा को यह अधिकार है कि वह संविधान के अनुच्छेद 244 (1) के अनुसार घोषित अनुसूचित क्षेत्र में रहने वाले किसी आदिवासी व्यक्ति की जमीन किसी गैर–आदिवासी ने गैर–कानूनी ढंग से कब्जा कर लिया है तो ग्राम सभा वह जमीन उस व्यक्ति को या उस व्यक्ति की मृत्यु होने की दशा में उससे कानूनी वारिशों को वापस दिलाएगी। यहाँ पर यह भी प्रावधान किया गया है कि अगर ग्राम सभा यह कब्जा दिलाने में असफल रहती है तो ग्राम सभा इस मामले को राजस्व के उपखण्ड अधिकारी के पास भेजेगी और उपखण्ड अधिकारी ऐसे व्यक्तियों या उनके कानूनी वारिशों को 3 महीने के भीतर कब्जा दिलावाएगा।

मध्यप्रदेश आबकारी (संशोधन) अधिनियम 1997

पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 की धारा 4 (ड) (प) में यह स्पष्ट किया गया है कि मादक दृव्यों को बनाना उन पर कब्जा और उनकी बिक्री से जुड़े अधिकार ग्राम सभा के पास रहेंगे। इसको ध्यान में रखते हुए आबकारी अधिनियम में निम्नलिखित बदलाव किए गए। ये बदलाव इस प्रकार हैं –

1. देशी मदिरा के विनिर्माण, इसके कब्जे तथा तथा इस मदिरा के उपयोग के संबंध में बने हुए कानून अनुसूचित क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों पर लागू नहीं होंगे। इसके अलावा अनुसूचित जनजातियों के सदस्य निम्नलिखित शर्तों के साथ आसवन विधि से देशी मदिरा को बना सकेंगे।

   (अ) अनुसूचित क्षेत्र के आदिवासी सदस्यों द्वारा सिर्फ घरेलू, समाजिक तथा धार्मिक समारोह पर उपयोग के लिए देशी मदिरा का निर्माण किया जाएगा।

   (ब) इस तरह बनाई गई मदिरा को बेचा नहीं जा सकता।

   (स) घरेलू, धार्मिक तथा सामाजिक समारोह के उपयोग के लिए बनाई गई देशी मदिरा के कब्जे की अधिकतम सीमा 4 5 लीटर प्रति व्यक्ति होगी और प्रति परिवार 15 लीटर होगी। धार्मिक तथा सामाजिक समारोह के अवसर पर एक परिवार 45 लीटर तक देशी मदिरा रख सकता है। यहाँ पर यह ध्यान देना जरूरी है कि ग्राम सभा अपने क्षेत्र में देशी मदिरा के कब्जे को ऊपर बताई गई सीमा को घटा सकती है।

2. ग्राम सभा अपने कार्य क्षेत्र के भीतर मादक द्रव्य के निर्माण, उसके कब्जे, परिवहन इस मादक द्रव्य के विक्रय और इसके उपभोग को व्यवस्था और नियमों के द्वारा नियंत्रित कर सकते हैं या प्रतिबंध लगा सकती है, लेकिन ऐसा कोई प्रतिबंध ऐसी फैक्टरी या विनिर्माण शाला पर लागू नहीं होगा जो मादक (नशीला) द्रव्य को बनाने का काम करती है और इस उपबंध के लागू होने से पहले से स्थापित है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

3. ग्राम सभा की पूर्व अनुमति प्राप्त किए बिना राज्य सरकार ग्राम सभा के भीतर न तो मादक द्रव्य की विनिर्माणशाला स्थापित कर सकती है और न ही नशीले पदार्थ की बिक्री की अनुमति दे सकती है।

4. अगर कोई भी ग्राम सभा अपने कार्यक्षेत्र के भीतर नशीले पदार्थ के बनने, बिक्री ओर उपभोग पर प्रतिबंध लगाती है तो इसका मतलब यह होगा कि

(अ) ग्राम सभा के भीतर नशीले पदार्थ या मादक द्रव्यों को बनाने की फैक्टरी (विनिर्माणशाला) स्थापित नहीं होगी।

(ब) किसी भी नशीले पदार्थ या मादक द्रव्य को बेचने के लिए दुकान या अन्य कोई व्यवस्था नहीं की जाएगी, अगर ऐसी कोई व्यवस्था या दुकान पहले से चली आ रही है तो ग्राम सभा के प्रतिबंध के आदेश के बाद आने वाले वित्तीय वर्ष के पहले दिन से बंद कर दी जाएगी।

(स) ग्राम सभा क्षेत्र के भीतर कोई भी व्यक्ति नशीले पदार्थ या मादक द्रव्य को न तो बना पाएगा, न परिवहन कर पाएगा और न ही बेच पाएगा।

4. इस अधिनियम में दिए गए अधिकारों के तहत् ग्राम सभा द्वारा पास किए गए किसी आदेश या विनिश्चय को लागू करवाने की जिम्मेदारी उस ग्राम सभा से संबंधित ग्राम पंचायत की होगी। जहाँ कहीं भी पंचायत को राज्य सरकार के सहयोग की जरूरत होगी। वहाँ पर ग्राम राजस्व विभाग के उपखण्ड मजिस्ट्रेट या उसके द्वारा अधिकृत किए गए ऐसे अधिकारी के पास जाएगी जो ग्राम पंचायत को उपेक्षित सहायता दिलवा सके।

मदिरापान

जनजातियों में मदिरापान का अत्यधिक महत्व है। अधिकतर जनजातियाँ मदिरापान के संबंध में बहुत संवेदनशील हैं तथा महुए के पेड़ को पवित्र मानती हैं। मदिरापान सदियों से उनकी सामाजिक परन्पराओं का एक भाग है। ये जनजातियाँ अपने घरों में मदिरा बनाती हैं तथा इस प्रकार के अधिकतर पेयों में कोई विशेष नशा नहीं होता। मदिरा अधिकतर शक्तिवर्धक का कार्य करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि मदिरापान इन जनजातियों के रीति–रिवाजों का एक अभिन्न अंग हैं तथा सामाजिक परम्पराओं में घुल–मिल गई हैं।

चना, बाजरे, चावल, गुड़ आदि द्वारा अपने घरों में बनाई गई मदिरा जनजातियों में बहुत लोकप्रिय है। अलग–अलग क्षेत्रों में इसके विभिन्न नाम हैं। यह मध्यप्रदेश में 'हँडिया', असम में 'पोंग', उत्तरपूर्वी क्षेत्रों में 'जू' पंजाब तथा हिमाचल प्रदेश में 'तुदगी'' आंध्रप्रदेश में 'काल्ही' बिहार में 'पछावे' तथा देश के विभिन्न जनजातीय क्षेत्रों में अलग–अलग नामों से जानी जाती है। उत्सवों, विवाहों मृत्यु, दाह संस्कार तथा अन्य समारोहों के समय जनजातियाँ मदिरा बनाती है तथा उनका सेवन करती हैं। कभी–कभी इच्छा होने पर भी जंगलों या घरों में इस प्रकार की मदिरा बनाकर मित्रों के साथ इसका सेवन किया जाता है।

संविधान के अनुच्छेद 47 ने राज्य सरकारों को उनके कर्त्तव्यों से अवगत कराते हुए स्पष्ट किया है कि राज्य सरकार अपने प्राथमिक कर्त्तव्यों के अंतर्गत अपने क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के जीवन स्तर, पोषण तथा जनस्वास्थ्य के विकास में योगदान दें तथा अन्य नशीली दवाओं के प्रयोग पर जो कि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं, निषेद्याज्ञा जारी करेगी। विभिन्न योजनाओं में गरीब व भुखमरी को समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम शोषण समाप्त करना आवश्यक है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जनजाति विकास की सभी योजनाओं में शोषण समाप्त करने को प्राथमिकता दी गई है। घेबर कमीशन द्वारा जनजातियों में मदिरापान तथा इसके प्रभाव की समस्या का अध्ययन तथा विश्लेषण करत समय आश्चर्यजनक तथ्य सामने आया कि कुछ स्थानों पर बाहरी मदिरा का चलन स्वतंत्रता के पश्चात् प्रारंभ हुआ। कमीशन के वक्ताओं के अनुसार ''हम इस प्रकार के बाहरी हस्तक्षेप के औचित्य को समाप्त नहीं कर सके।। विशेषतया तब जबकि जनजातियों के पास अपनी बनाई मदिरा पर्याप्त मात्रा में है तथा इसे यह लोग सामाजिक रूप से मान्यता व सम्मान भी देते हैं।'' अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के भूतपूर्व आयुक्त प्रो. एम. के. बोस (1970–71) ने इन मदिरा विक्रेताओं को जनजातीय क्षेत्रों में 'शोषण' का माध्यम बताया है। घेबर कमीशन ने इस प्रकार की मदिरा के विक्रय पर रोक लगाने का सुझाव दिया है।

मदिरा विक्रय की वर्तमान प्रणाली जनजातीय आर्थिक व्यवस्था के लिए अत्यधिक हानिकारक हैं। सरकार द्वारा लाइसेंस प्राप्त ठेकेदारों द्वारा बाहरी मदिरा के विक्रय ने जनजातियों को बहुत सी समस्याएँ से उलझा दिया है। मदिरा विक्रय एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से तमाम बाहरी असामाजिक तत्व इन पिछड़े इलाकों में पहुँचकर अवांछनीय तथा आपत्तिजनक कार्य करते हैं। इस प्रकार के ठेकेदारा स्थानीय लोगों के बीच भय उत्पन्न करने के उद्देश्य से लठैत तथा गुण्डों को संरक्षण देते हैं। यह लोग बलपूर्वक अनाधिकृत रूप से आदिवासियों की झोपड़ियों में प्रवेश कर इन्हें मदिरा बनाने से रोकते हैं। लाइसेंस प्राप्त दुकानदार फेरीवालों को गाँव–गाँव में भेजते हैं जिससे कि मदिरा के विक्रय में वृद्धि है। जनजातीय समुदायों के समक्ष इन

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

गैर–कानूनी गतिविधियों से बचने का कोई उपाय नहीं है। प्रत्येक गाँव में इस प्रकार की गैर–कानूनी दुकानें जनजातीय युवकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन जाती हैं। इस प्रकार जनजातीय लोग ऋणग्रस्त होते हैं तथा उनकी भूमि के हस्तांतरण तथा अधिग्रहण तक की नौबत आ जाती है। नियमों का उल्लंघन होता है परन्तु अधिकतर सरकारी अधिकारी तो इन ठेकेदारों से मिले होते हैं जिसके कारण किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं होती। ठेकेदारों ने प्रति विवाह, प्रति फसल या प्रति परिवार मदिरा की एक निश्चित मात्रा, क्रय तथा उपभोग लोगों को गैर–कानूनी ढंग से मदिरा बनाने जैसे सही या गलत मामलों में फसाने या जेल भिजवा देने जैसी बातों से भयभीत किया जाता है। प्रभावशाली व्यवसायी आबकारी, पुलिस, राजस्व, वन तथा अन्य संबंधित विभागों के अधिकारियों का प्रश्रय प्राप्त करने में सक्षम हैं। जनजातीय लोग इन बाहरी लोगों के समक्ष अपने को अकेला पाते हैं। कुछ नए अध्ययनों से पता चलता है कि आबकारी विभाग द्वारा प्राप्त अधिक राजस्व का सीधा संबंध अधिक ऋणग्रस्तता तथा भूमि हसतांतरण से है। उपरोक्त तथ्यों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बाहरी मदिरा की लत जनजातियों की विभिन्न समस्याओं तथा दुर्दशा का एक मूलभूत कारण है। अपनी इन समस्याओं से छुटकारा पाने तथा साहूकारों के चंगुल से बाहर आने के लिए इन जनजातियों को मदिरा से दूर रखना आवश्यक है। बाहरी मदिरा के उपभोग तथा विक्रय की बुराईयों से इन जनजातियों द्वारा स्वयं बनाई गई मदिरा सदियों से इनके जीवन का अभिन्न अंग रही है तथा इस मदिरा के उपभोग से इनके सामाजिक और आर्थिक ताने–बाने पर किसी प्रकार का बुरा प्रभाव नहीं पड़ा है। इनकी धार्मिक व पारंपरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ इस मदिरा से इन्हें स्वास्थ्य लाभ भी होता है तथा उनके कठिन और परिश्रम जीवन में कुछ आनन्द की अनुभूति भी होती है। पारंपरिक मदिरा सेवन की प्रथा को त्यागना उनकी स्वेच्छा पर निर्भर करता है।

मध्यप्रदेश साहूकारी (संशोधन) अधिनियम – 2001

वर्ष 1934 में सी.पी.एवं बरार प्रान्त के लिए साहुकारी अधिनियम बनाया गया, जिसे भारत के गवर्नर जनरल ने गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट की धारा 80–क की उपधारा (3) के तहत अनुमति दी। इस अधिनियम की मध्यप्रदेश के गठन के बाद अधिनियम क्रमांक 38 के द्वारा अंगीकृत करके पूरे मध्यप्रदेश पर लागू किया गया। वर्ष 1982 में इस अधिनियम में एक बड़ा संशोधन हुआ और इसके बाद वर्ष 2001 में संशोधन के द्वारा पंचायतों को इस अधिनियम में महत्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी गई। वर्ष 2001 में किए गए संशोधनों को हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

साहूकार कौन हैं –

कोई भी व्यक्ति जिसने अपनी नियमित व्यवस्था के रूप में रूपया उधार दिया हो और इस उधार देने का मूल उद्देश्य लाभ कमाना हो। मतलब यह है कि उधार देने वाला व्यक्ति नियमित रूप से अनेक लोगों को लाभ कमाने के लिए उधार देता हो।

ऋण क्या है –

पैसा देने वाले साहुकार और उधार लेने वाले व्यक्ति के बीच अंतिम लेन–देन (विवादित लेन–देन) की तारीख से 12 साल पहले तक नकद था वस्तु के रूप में दिए गए अग्रिम को ऋण माना जाएगा। इस अधिनियम के लिए निम्न को ऋण नहीं माना जाएगा –

1. संस्था पंजीयन अधिनियम 1860 के अधीन पंजीकृत किसी समिति को दिया गया ऋण या समिति द्वारा दिया गया ऋण या जमा।
2. संस्था पंजीयन अधिनियम 1860 के अधीन पंजीकृत किसी समिति को दिया गया ऋण या समिति द्वारा दिया गया ऋण या जमा।
3. शासन या शासन से अधिकृत प्राधिकरण द्वारा दिया गया ऋण अग्रिम।
4. कृषि मजदूर को उसे मजदूरी पर रखने वाले किसान पर दिया गया ऋण।
5. कोई भी ऐसा लेन–देन जो कानून में बदलाव के कारण अग्रिम के रूप में दिखाई दे।

रजिस्ट्रीकर्त्ता प्राधिकारी

ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जिला पंचायत जनपद पंचायत और ग्राम पंचायत को रजिस्ट्रीकृत प्राधिकारी माना गया है। नगरीय क्षेत्र के लिए नगर निगम, नगर पालिका परिषद या नगर पंचायत को रजिस्ट्रीकृत प्राधिकारी माना गया है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

ग्राम सभा द्वारा प्रतिबंध

अगर ग्राम सभा प्रस्ताव पास करे तो, प्रमाण पत्र होने के बाद भी व्यक्ति ग्राम सभा क्षेत्र में न तो धन उधार देगा और न ही साहूकारी कारोबार करेगा। अगर साहूकार इसका उल्लंघन करता है तो उस पर 2000 रूपये का जुर्माना लगेगा और अगर इसके बाद भी धन उधार देता है तो 5000 रूपये तक का जुर्माना देगा। पाँचवी अनुसूची वाले क्षेत्र में ग्राम सभा के प्रस्ताव के विरूद्ध साहूकारी या व्यवसाय करने पर –

- या तो दो साल के कारावास की सजा भुगतेगा या फिर
- 10 हजार तक का जुर्माना देगा या फिर दोनों दण्ड एक साथ भी दिए जा सकते हैं।
- अगर साहूकार के पास पंजीयन प्रमाण–पत्र नहीं है तो वह धन वसूली नहीं कर सकता।

कर्ज की समस्या

जनजातियों की अर्थव्यवस्था काफी हद तक वस्तुओं और सेवाओं के विनिमय–व्यापार पर आधारित है। कर्ज का लेन–देन भी ज्यादातर श्रम और वस्तुओं के आधार पर होता है। इस प्रकार कर्ज की अदायगी रकम के रूप में नहीं अवधि और अनुपात की शर्तों के आधार पर मांगी जाती है। सिक्कों की कमी के कारण असली वस्तुओं की अदला–बदली होती है जैसे– जमींदार अपने काश्तकारों को यदि बीज देता है तो उसके बदले में वह उसकी भावी फसल में उसी अनाज की मांग करता है। वसूली उसी वस्तु के रूप में उसकी भावी फसल के बाद होती है। वस्तु के रूप में दिए गए कर्ज की ब्याज भी उसी वस्तु के रूप में लिया जाता है जिसकी वजह से कर्ज लेने वाला अधिकांशतः हमेशा कर्जदार बना रहता है। गुजर –बसर के खर्च वाली अर्थव्यवस्था में रहने वाले जनजातियों के लोग बीच खरीदने, छोटे मोटे खेतिहर उपकरण खरीदने, अपने सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों का पूरा करने और कभी–कभी कपड़ा मिट्टी का तेल, घरेलू सामान आदि खरीदने के लिए भी कर्जदार बन जाते हैं। इस स्थिति का लाभ स्थानीय सूदखोर उठाते हैं और तरह–तरह से जनजातियों के लोगों का शोषण करते हैं।

भू–अर्जन एवं पुनर्वास

पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 की धारा 4 (झ) में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुसूचित क्षेत्रों में विकास परियोजनाओं के लिए भू–अर्जन से पहले तथा इन परियोजनाओं से प्रभावित व्यक्तियों के अनुसूचित क्षेत्र में व्यवस्थापन एवं पुनर्वास से पहले समुचित स्तर पर ग्राम सभा से परामर्श किया जाएगा और ऐसी परियोजनाओं के क्रियान्वयन का समन्वयन राज्य स्तर पर किया जाएगा। इसका मतलब यह है कि –

1. अनुसूचित क्षेत्र में जमीन के अधिग्रहण से पहले संबंधित ग्राम सभा या समुचित स्तर को पंचायत (ग्राम पंचायत, एक से अधिक पंचायतों के गाँवों के परियोजना क्षेत्र में आने पर जनपद पंचायत और जनपद से बड़े क्षेत्र की स्थिति में जिला पंचायत) से सलाह करना जरूरी है।
2. इस सलाह के बाद अधिग्रहण की कार्य योजना और प्रभावित होने वाले परिवारों के पुर्नस्थापन एवं पुनर्वास की रणनीति बनाई जाएगी।
3. इस पूरी प्रक्रिया में राज्य सरकार समन्वय के द्वारा यह सुनिश्चित करेगी कि कानून का पालन हुआ है और अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों का संरक्षण भी हुआ है। इस संबंध में राजस्व विभाग ने यह निर्देश दिया कि जब कभी भी संविधान की पाँचवी अनुसूची के तहत घोषित अनुसूचित क्षेत्र में भूमि का अधिग्रहण किया जाए तब ऐसी भूमि के अधिग्रहण के समय भू–अर्जन अधिनियम 1984 की धारा (4) के तहत अधिग्रहण की सूचना जारी करने से पहले ऐसी ग्राम सभा से सलाह–मश्वरा किया जाए और उसके बाद ही भू–अर्जन या अधिकग्रहण की कार्यवाही की जाए।

आदिवासियों का भूमि अर्जन एवं पुनर्वास

भूमि अधिग्रहण एक तरह से हमारे देश की परम्परागत कृषि आधारित व्यवस्था में रूपान्तरण के लिए एक ऐसे संज्ञानहीन दुर्दभ यंत्र के रूप में काम कर रहा है जो अधिसंख्य गरीबों से उनकी जिंदगी के आधारभूत प्राकृतिक संसाधनों को छीनकर उन से जुदा कर देता है। किसान के लिए उसका खेत मेहनत मजदूरी करके गुजर बसर करने का आधार है। अपनी जमीन से जुड़ा स्वाभिमानी किसान कहाँ फिरेगा अपनी मेहनत लेकर बेचने के लिए झल्ली लगाकर कानून चाहे कुछ भी हो, लेकिन किसी भी नागरिक से उसकी जीविका का साधन या जिंदगी का आधार नहीं छीना जा सकता। भूमि अधिग्रहण में संपत्ति का विनिमय है, जीविका के आधार की कल्पना ही नहीं। आदिवासी की जमीन जब अधिग्रहण की जाती है तो या जो उसे नकद

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

पैसा दे दिया जाता है या फिर बहुत दूर भूमि जिस पर वह मन मसोस कर खेती करता है और यदि पैसा मिलता हैतो वह पैसे का विनिमय तो जानता नहीं अतः वह कुछ समय मौज–मस्ती कर वह सारा पैसा खत्म कर देता है और बन जाता है मजदूर। यही कारण है कि विकास के बढ़ते चरणों के साथ आदिवासी इलाकों में खुशहाली तो आ जाती है अगर उसके चारों और बिखराव और मुफिसली का आलम बन जाता है। आदिवासी बेसहारा होकर जब जंगल की और भागता है तो उसे वहाँ भी ठिकाना नहीं मिलता और फिर उसे आखिर में दूसरे इलाकों में भूमिहीन मजदूर और शहरों की फुटपाथ और गन्दी बस्त्यिों में ही जगह मिल पाती हैं यही त्रासदी है आदिवासी इलकों के विकास की।

गौण खनिज का उत्खनन पट्टा

गौण खनिज के उत्खनन के लिए पट्टे के लिए जब कोई आवेदन मिलेगा, त बवह पट्आ मंजूर करने वाले अधिकारी संबंधित ग्राम पंचायत की राय प्राप्त करने के बाद ही आवेदन देने वाले व्यक्ति या संस्था को उत्खनन पट्टा दे सकेंगे या पुराने पट्टे का नवीनीकरण कर सकेंगे। या आवेदक को यह कह सकेंगे कि उसे पट्टा नहीं दिया जा सकता।

लघु वनोपज के संबंध के अनुसूचित क्षेत्र के लिए विशेष व्यवस्था

पंचायत उपबन्ध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 के बिन्दु 4(इ) (ii) में यह कहा गया है कि ग्राम सभा को गौण वन उपज का मालिकाना हक दिया जाय। इस संबंध में निम्नलिखित प्रावधान किये गए हैं।

(1) गौण वन उपज का लघु वनोपज क्या है – वनों या जंगलों से मिलने वाले ऐसे उत्पाद जिसमें लकड़ी शामिल नहीं है और जिनको निकालने या इकठ्ठा करने से वनों को कोई नुकसान न हो। इस प्रकार से स्पष्ट किए गए लघु वनोपज में खनिज पदार्थ एवं वन्य प्राणियों के अवयन (उनके शरीर या शरीर का कोई हिस्सा) शामिल नहीं होंगे।

(2) लघु वनोपज का दोहन कौन करेगा – गांवो में रहने वाले संग्राम हक पहले की तरह ही लघु वनोपज को इकट्ठा करते रहेंगे। लघु वनोपज का दोहन पहले की तरह ही सहकारी समितियों तथा म.प्र. लघु वनोपज व्यापार एवं विकास संघ की देख – रेख में होगा।

(3) लघु वनोपज के मुनाफे से पैसा समितियों को दिया जाना – लघु वनोपज के दोहन और व्यापार पर जो भी खर्च आएगा उसकी मुनाफे में से घटाने के बाद बचा हुआ शुद्ध मुनाफा सरकारी समितियों को दिया जाएगा। समितियां इस पैसे को इस प्रकार खर्च करेगी।

(अ) प्राप्त मुनाफे का 20 प्रतिशत भाग वन विभाग की देखरेख में वनोप्रदान पर खर्च करेगी।

(ब) कम से कम 50 प्रतिशत भाग वनोपज संग्राहकों को उनके द्वारा संग्रहित मात्रा के अनुपात में बांटेगी।

(स) बची हुई धनराशि का उपयोग अपने विवेक के अनुसार अपने – अपने गांव की मूलभूत सुविधाओं के विकास परखर्च करेगी या संग्राहकों को उनके द्वारा इकट्ठे पत्तों के अनुपात में बांट देगी।

(4) लघुवन उपज सहकारी समिति और जिला यूनियन के सदस्य कौन होंगे – जो व्यक्ति स्वयं लघु वनोपज के वास्तविक संग्राहक है वहीं लघु वनोपज सहकारी समिति और इन समितियों के जिला यूनियन के सदस्य होंगे। जो वास्तविक संग्राहक नहीं है उन्हें पद से हटाया गया।

(5) यह व्यवसाी किन क्षेत्रों में लागू होगी – यह व्यवस्था अनुसूचित क्षेत्रों सहित पूरे प्रदेश में लागू की गई हैं।

लघु वनोपज –

वन क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख परम्परागत रूप से बहुत प्राचीनकाल से ही वनों से प्रात होने वाली लघु वनोपज के आर्थिक मूल्य एवं लाभों से परिचित रही है। अभी तक लघु वनोपजों का महत्व आधारभूत रूप से इन आदिवासियों की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु रहा, परंतु अब परिस्थितियां परिवर्तित हो रही हैं ऐतिहासिक दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि पूर्व में ऐसे वनोत्पाद जिनका कोई महत्वपूर्ण तात्कालिक वार्णिज्यक मूल्य नहीं था, लघुवनोपज के नाम से बुलाए गए। भारत में लघुवनोपज आदिवासियों एवं स्थानीय समुदायों को उल्लेखनीय रोजगार के अवसर एवं आय प्रदान करते है। स्थानीय समुदाय इन विविध वनोपजों का संग्रहण एवं विपणन करते है। अपनी स्वयं की दैनिक आवश्यकताओं एवं भोजन हेतु भी आदिवासी एवं ग्रामीणजन शहद, मशरूम, चिरौंजी, महुआ एवं अनेकानेक वनोपजों पर निर्भर रहते हैं।

लघु वनोपज को काष्ठ उत्पाद के बाद दुसरा स्थान प्रदान किया गया है। काष्ठ उत्पाद को मुख्य एवं लघुवनोपज को गौण उपज भी कहते है। भारत के वनों से प्राप्त आय का लगभग 60 प्रतिशत लघुवनोपज से प्राप्त हेता है। गैर सरकारी आंकड़ों

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 11, Issue 1, November 2021
Impact Factor: 5.731

के अनुसार लघुवनोपज से प्राप्त आय 60 प्रतिशत से भी अधिक है। भारत के 50 मिलियन से भी अधिक आदिवासियों को लघुवनोपज अधिकांशतः स्थानीय लोग उपयोग करते हैं यही स्थानीय लोग लघु वनोपज का संग्रहण कर उसका विक्रय भी करते हैं।

भारतीय वानिकी क्षेत्र में लघु वनोपजों से लगभग 70 प्रतिशत से अधिक रोजगार सृजन होता है। वार्णिज्यक लघु वनोपज प्रतिवर्ष 3 मिलियन से भी अधिक आय प्रदान करती है। लघुवनोपज लाखों ग्रामीण भारतीयों को रोजगार के अवसर प्रदान करती हैं। ग्रामीण यदि लघुवनोपज का व्यवसाय न करते तो वे कृषि श्रमिक या गरीब शहरी की तरह जीवनयापन करने पर विवश होते हैं इसके अतिरिक्त महत्वपूर्ण संख्या में लोग लघुवनोपज ग्रामीण रोजगार के क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी सृजित करता है। अधिकांश प्रांतों में लघुवनोपज के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र न्यूनतम मजदूरी 30–40 रूपए प्रतिदिन कमाते हैं, जबकि अधिकांशतः लघु वनोपज संग्रहणकत्र को मात्र 5 – 15 रूपये प्रतिदिन की मजदूरी प्राप्त होती है। कम मजदूरी यह प्रदर्शित करती है कि वनों का प्रबंधन गैर – जिम्मेदार है एवं उत्पादकता न्यून है। प्रदेश की व्यापार नीति एवं व्यक्तिगत क्रेता ने लघुवनोपज की संभावनाओं का आंकलन कमतर किया है।

लघु वनोपज का अधिकार

सभी जनजातियों की अर्थव्यवस्था दोहरी है, एक तरफ कृषि उत्पादन और दूसरी तरफ वन उत्पादन। वन – विभाग द्वारा वन की वस्तुओं के इस्तेमाल पर लगाये गए प्रतिबन्धों के कारण जनजातियों की अर्थव्यवस्था काफी गड़बड़ा गयी है। वे अपने भोजन के लिए शिकार नहीं कर सकते और न बिना आज्ञा लिए लकड़ी, शहद, बांस आदि एकत्र कर सकते हैं। इसके लिए वन विभाग के अधिकारियों से परमिट लेना धरती पर गंगा को लाने जैसा दुष्कर प्रयास है। इस तरह उन्हें वन के कर्मचारियों की दया का पात्र बना दिया गया है। वे उन्हें जलाने की लकड़ी व वन की दूसरी छोटी–छोटी वस्तुएं एकत्र करने के लिए उनसे गेर–कानूनी घूस आदि लेकर उनका शोषणकरते है। ठेकेदारों के जरिए वन – विभागों द्वारा वनों के शोषण का रिवाज एक आम बात रही है, हालांकि उसी काम स्वस्थ ओर साफ – सुधरे ढंग से जनजाति के लोगों की सहकारी समितियों से कराया जा सकता है। जिसमें सरकार और जनजाति के लोगों को बहुत कम पगार पर काम करने वाले मजदूर बना दिया गया हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

[1]. मेहता, प्रकाशचन्द्र, 1993, भारत के आदिवासी, शिवा पब्लिशर्स, उदयपुर
[2]. प्रसाद,डॉ.भागीरथ, 1996, आगे आयें लाभ उठायें,जनसम्पर्क विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल
[3]. नायडू, पी.आर., 1997, भारत के आदिवासीविकास की समस्याएं, राधा पब्लिकेशन्स,नई दिल्ली
[4]. तिवारी,डॉ. शिवकुमार, व शर्मा, डॉ. श्रीकमल, 2000, मध्यप्रदेश की जनजातियाँमध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
[5]. हसनैन, नदीम , 2001 जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
[6]. वैदय, नरेश कुमार, 2003 जनजातीय विकास : मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
[7]. मुकर्जी, रविन्द्रनाथ, 2003, सामाजिक अनुसंधान, रावत पब्लिकेशन्स,जयपुर
[8]. वैद्य, नरेश, 2003, 'जनजातीय विकास' रावत पब्लिकेशन जयपुर एवं नई दिल्ली
[9]. सिंह, लीना 2005 अनुसूचित क्षेत्रः स्वशासन एवं विकास, डिबेट, गैर सरकारी संस्था अल्कापुरी, भोपाल